UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sociology
Research Link - 161, Vol - XVI (6), August - 2017, Page No. 48-50
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

ग्रामीण समाज में गरीबी एवं गरीबी उन्मूलन

प्रस्तुत शोधपत्र में ग्रामीण समाज में गरीबी एवं गरीबी उन्मूलन पर चर्चा की गई है। गरीबी उन्मूलन परियोजना के द्वारा समाज के ऐसे वर्ग, जो निर्धनता अर्थात् आर्थिक कमजोरी क कारण अपने तथा अपने परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते, वह ऐसे घरों में निवास करने पर मजबूत रहते हैं, जिसकी छतों से पानी की बूंदें टपकती रहती हैं, जिसके चूल्हों पर बड़ी ही मुश्किल से दो वक्त का भोजन पकता है, तन ढकने के लिए उसे मुश्किल से कपड़ा नसीब होता है, जो दूसरों की दया पर निर्भर होता है, अर्थात् निर्धन व्यक्ति को दया का पात्र समझा जाता है, जो गरीबी के कारण बच्चों को अच्छी शिक्षा नहीं दे पाते, उनकी जरुरतें पूरी नहीं कर पाते। ऐसे वर्ग के लोगों की आर्थिक-सामाजिक विकास के क्षेत्र में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के तहत गरीब लोगों को ऊँचा उठाने का प्रयास किया जाता है।

डॉ.प्रमोद शर्मा* एवं डॉ.महेन्द्र शर्मा**

प्रस्तावना :

किसी भी विकासशील देश के लिए गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम महत्वपूर्ण पहलू होता है। गरीबी उन्मूलन के माध्यम से केन्द्र एवं राज्य सरकार ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों की निर्धनता दूर करने के लिए योजनाएँ संचालित करती है। इन योजनाओं का लाभ प्राप्त कर गरीब वर्ग अपनी सामाजिक परिस्थिति में परिवर्तन लाने का प्रयास करते हैं। गरीबी हमारे समाज की एक ज्वलंत समस्या है। गरीबी की दर में निरन्तर वृद्धि होने से हमारा समाज विघटित हो रहा है। किसी भी देश या राज्य के विकास के लिए समाज का विकास होना अत्यंत आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता की स्थिति और भी दयनीय होती है। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार का अभाव एवं कृषि संबंधित कार्य केवल कुछ ही महीनों तक होने के कारण इनकी आर्थिक स्थिति और भी कमजोर होती है। उन्हें बच्चों के लिए कपड़े, भोजन, बीमारियों का इलाज आदि के लिए दूसरों से उधार लेना पड़ता है, अर्थात् ऋणग्रस्त जीवन बिताने को मजबूर होना पड़ता है। इसी गरीबी या ऋणग्रस्तता के कारण व्यक्ति को बंधवा मजदूर के रूप में कार्य करने के लिए या आत्महत्या करने के लिए विवश होना पड़ता है। वर्तमान में बढ़ती हुई महंगाई तो इन निर्धन व्यक्तियों की कमर ही तोड़कर रख दी है।

निर्धनता : निर्धनता व्यक्ति को आभाव ग्रस्त जिन्दगी गुजारने को विवश कर देता है। निर्धन व्यक्ति अपने परिवार के भरण–पोषण करने, बच्चों को शिक्षा देने आदि के लिए उसे दूसरों के ऊपर निर्भर रहना पड़ता है, उसे उच्च प्रतिष्ठित लोगों का तिरस्कार सहना पड़ता है, निर्धनता एक ऐसी स्थिति होती है, जो व्यक्ति को इतना कमजोर एवं निर्बल बना देती है कि उसे अपने पेट भरने के लिए दूसरों के आगे हाथ फैलाना, गिड़गिड़ाना, पूँजीपतियों या उच्च प्रतिष्ठित व्यक्तियों का शोषण, तिरस्कार को सहन करना पड़ता है। निर्धन व्यक्तियों इनकी संताने फटे–पुराने कपड़े पहनकर दूषित भोजन ग्रहण कर, अपने दर्द को उसी फटे कपड़े में छिपा लेते है। निर्धनता व्यक्ति को इतना मजबूर एवं विवश बना देता है कि उसे अपने परिवार भरण पोषण के लिए भिक्षा मांगने की ओर अग्रसर कर देती। तथा कुछ ऐसे निर्धन व्यक्ति होते है जो निर्धनता को दूर करने तथा परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपराध करने को मजबूर हो जाते है या कुछ ऐसे व्यक्ति होते है जो निर्धनता के दर्द को सहन नहीं कर पाने के कारण आत्महत्या भी कर लेते है।

निर्धनता पर विचार : ग्रेट–ब्रिटेन के रौन्ट्री प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होने निर्धनता से जुड़ी समस्याओं का अध्ययन किया। उनके अनुसार "वह परिवार निर्धनता की स्थिति में होता है, जिसकी सम्पूर्ण आय कम से कम आवश्यकताओं को प्राप्त करने में सक्षम होता है।"

(1) **लेस्टर ब्राउन** के मतानुसार "गरीबी निराशा है, ऐसे पिता की, जो दरिद्र देश में उत्पन्न हुआ है, जिसे सात व्यक्तियों के परिवार का पालन करना है, पर जो बेरोजगारी बढ़ती भीड़ में शामिल होता है और जिसके सामने बेरोजगारी की क्षतिपूर्ति की कोई संभावना नहीं हैं। गरीबी लालसा है, ऐसे नवयुवक की जो गांव के विद्यालय के बाहर तो खेलता है पर उस विद्यालय में प्रवेश नहीं कर सकता क्योकि उसके माता–पिता का शोक है जो अपने तीन वर्ष के बालक को बीमारी से मरते तो देख सकता है। पर इलाज नहीं करा सकते क्योंकि दवाईयों के लिए उनके पास पैसे नहीं हैं।''

भारत में निर्धनता : व्यवहारिक रूप में निर्धनता रेखा कैलोरी ग्रहण के न्यूनतम वांछित स्तर से निर्धारित की जाती है। भारत में इसका निर्धारण ग्रामीण क्षेत्र में प्रति व्यक्ति 2400 कैलोरी

**अध्यक्ष (समाजशास्त्र अध्ययनशाला), पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)*
***सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र विभाग), सेठ आर.सी.एस.कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, दुर्ग (छत्तीसगढ़)*

तथा शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी के ग्रहण से किया जाता है। जिन्हें यह कैलोरी प्राप्त नहीं हो पाता उसे गरीबी रेखा के नीचे माना गया है।

देश में निर्धनता अनुपात के ताजा आकड़े योजना आयोग ने मार्च 2007 में जारी किये थें, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के 2004–2005 के सर्वेक्षण पर आधारित इन आंकड़ों में निर्धनता की स्थिति के आंकलन के लिए दो तरह का प्रश्नावली का इस्तेमाल किया गया। इसमें एक 30 दिन के यूनीफोर्म रिकाल पीरियड (URP) उपभोग व्यय पर व दूसरा 365 दिनों के संदर्भ वाले मिक्स्ड रिकॉल पीरियड (MRP) पर आधारित है। दोनों विधियों में मुख्य अंतर यह है कि 30 दिन की यूनीफोर्म रिकाल पीरियड के अंतर्गत 30 दिनों के चक्र के दौरान समस्त उपभोग का आंकड़े शामिल किये जाते है। जबकि मिक्स्ड रिकॉल पीरियड के अंतर्गत 30 दिनों के व्यय का अतिरिक्त पाँच गैर खाद्य मदों यथा कपड़े, जूते, टिकाऊ वंस्तुएँ, शिक्षा तथा संस्थागत चिकित्सा व्यय को भी शामिल किया जाता है।

निर्धनता के इस प्रारूप को तीन उप–समूहों में विभक्त किया जा सकता है :

(1) दीन–हीन या दरिद्र – 77.00 रूपये प्रति माह प्रति व्यक्ति।

(2)अत्यंत निर्धन – 92.00 रूपये प्रति माह प्रति व्यक्ति।

(3) निर्धन – 130 रूपये प्रति माह प्रति व्यक्ति।

निर्धनता सापेक्षिकता और असमानता का दृष्टिकोण : भारत में निर्धनता संबंधी आंकड़ों में बड़ा भारी विरोधाभाष देखा जा सकता है। वाशिंगटन स्थित संस्थान "ब्रेड फार वर्ल्ड" की रिपोर्ट (1992) के अनुसार भारत में निर्धनता का प्रतिशत लगभग 25 है, जबकि संयुक्त राष्ट्र की संघ की संस्था यू.एन.डी.पी. के अनुसार भारत में निर्धनता की रेखा से नीचे रहने वाले लोगों का प्रतिशत लगभग 23 है। निर्धनता को निम्न बिन्दुओं पर भी समझा जा सकता है :

(1) भारत की समस्याओं में निर्धनता सबसे गंभीर समस्या है। इससे सामाजिक निराशा जन्म लेती है तथा समाज में प्रायः उथल–पुथल का खतरा पैदा हो सकता है। इसलिए "गरीबी हटाओ" आज सरकार का मुख्य उद्देश्य बन गया है।

(2) विकासशील एवं अल्प विकसित राष्ट्रों में बढ़ती हुई जनसंख्या का वर्तमान रोजगार स्रोतों के अनुकूल सामंजस्य नहीं होने के परिणामस्वरूप निर्धनता बढ़ती जा रही है। प्रतिवर्ष लगभग 30 खरब डालर की वस्तुएँ और सेवाएँ पैदा करने वाले विश्व में आज भी 130 करोड़ व्यक्ति अत्यधिक विपन्नता की जिन्दगी बसर कर रहे हैं और 80 करोड़ व्यक्तियों को खाने के लिए पर्याप्त भोजन भी प्राप्त नहीं होता है। यद्यपि पाँच दशकों (1950–2000) के दौरान विश्व के लगभग 6 गुना आर्थिक विकास हुआ है। अभी भी विश्व के विकासशील देशों में गरीबी उन्मूलन एवं विकास कार्यक्रम करोड़ों परिवारों की दहलीज पर नहीं पहुँच पाया है। भारत में सन् 1960 में निर्धनता रेखा से नीचे जीवनयापन करने वालों का पता लगाने का प्रयास प्रारंभ किया गया और उन्हें निर्धनता रेखा से ऊपर उठाये जाने के भरसक प्रयास किए गए, लेकिन विडम्बना है कि स्वतंत्रता के 50 वर्षो के पश्चात आज भी देश की लगभग 36 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा के नीचे जीवनयापन करने के लिए विवश है।

(3) निर्धनता, ग्रामीण विकास में सबसे बड़ी समस्या है। निर्धनता एवं ग्रामीण विकास की समस्या मूलतः एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। ग्रामीण विकास के अंतर्गत कृषि, ग्रामीण उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सेवाओं का विकास सम्मिलित है। पूर्व प्रधानमंत्री, स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गाँधी ने 20 सूत्रीय कार्यक्रम के अंतर्गत निर्धनता उन्मूलन एवं ग्रामीण विकास के कार्यक्रम पर विशेष ध्यान दिया एवं गरीबी हटाओ का नारा दिया था। इसके अंतर्गत 2 अक्टूबर 1980 को समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की शुरूआत की जिसे सभी विकास खण्डो में आंरभ किया गया।

(4) गरीबी उन्मूलन एवं विकास कार्यक्रम, करोड़ों परिवारों की समस्या दूर करने के लिए है। गरीबी के संबंध में मानव विकास रिपोर्ट 1997 के अनुसार "विश्व के प्रति पॉच वर्ष से कम आयु के लगभग 120 लाख बच्चे दम तोड़ देते है, जिनमें से अधिकांश को जीवित बचाया जा सकता है। जीवित बच्चों में से प्रत्येक वर्ष लगभग 5 लाख बच्चे "विटामिन सी" की कमी से रोगग्रस्त हो जाते है। गरीबी के कारण लगभग 25 करोड़ बच्चे प्राथमिक अक्षर ज्ञान से दूर रहते है।

विश्व बैंक का आकलन – आंकड़ों के अनुसार भारत में लगभग 42 करोड़ से अधिक लोग सन् 1981 में सवा डालर से कम प्रतिदिन अर्जित करते थे। यह संख्या सन् 2005 में बढ़कर 45.6 करोड़ से अधिक हो गई। यद्यपि विश्व बैंक ने भारत पर उपलब्ध कराए आंकड़ों के अनुसार गरीबी की विभाजन रेखा यद्यपि ऊपरी तौर पर 1990 से 2005 तक पंद्रह वर्षो में 59.8 प्रतिशत से 41.6 प्रतिशत घटा है।

सन् 1973–74, 1978–79, 1984–85 और 1993 में यह निर्धनता रेखा ग्रामीण क्षेत्रों में क्रमशः 49.09 रू., 76.00 रू, 107.00 रू एवं 130 रू. में थी। वर्ष 1993–94 में गरीबी का प्रतिशत लगभग 32.27 प्रतिशत था जो वर्ष 1999–2000 में घटकर लगभग 27.09 प्रतिशत रह गया है। अतः गरीबी एक वैश्विक मुद्दा है और इन सामाजिक समस्याओं से संबंधित विषय को ध्यान में रखकर अनेक योजनाएँ संचालित की जाती है।

निर्धनता की श्रेणियाँ (वर्ग) : गरीबी–उन्मूलन कार्यक्रमों की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि योजना बनाते समय या क्रियान्वित करते समय यह स्पष्ट होना चाहिए कि योजना किसके लिये बनाई गई है। अतः गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम तभी सफल हो सकते हैं, जब गरीबों के श्रेणियाँ स्पष्ट हों। जो सामान्यतः निम्न हो सकते हैं :

(1) भूमिविहीन खेतिहर मजदूर (2) भूमि स्वामित्व वाले खेतिहर मजदूर (3) दस्तकार (4) सीमान्त किसान (5) अनुसूचित जाति एवं (6) अनुसूचित जनजाति।

गरीबी उन्मूलन हेतु संचालित योजनाएँ : उन्मूलन से तात्पर्य किसी विषयवस्तु से संबंधित समस्याओं का समाधान करने के तरीके से है। अतः इस स्थिति पर पुनः गम्भीरता से विचार करते हुये इस संदर्भ में स्वरोजगार के कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया गया, क्योकि यह कार्यक्रम ही गरीबी दूर करने एवं आय बढ़ाने तथा अच्छा जीवन धारण करने योग्य स्थाई आधार बनाता

है और इन सामाजिक समस्याओं से संबंधित विषय को ध्यान में रखकर समय–समय पर अनेक योजनाएँ संचालित की जाती रही हैं, इसलिए केन्द्र एवं राज्य सरकार ने विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से स्वरोजगार कार्यक्रमों को विशेष महत्व दिया। ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे अधिक गरीबों की संख्या देखी गई है और ग्रामीण लोग आज के दौर की विभिन्न सुख–सुविधाओं एवं सभ्यता से परे है, इसी कारण गांवों का सर्वांगीण विकास नहीं हो पाता है।

भारत में स्वंतत्रता प्राप्ति के बाद केन्द्र व राज्य सरकारों ने समय–समय पर राज्य व राष्ट्रीय स्तर पर ग्रामीण गरीबी उन्मूलन के संबंध में निम्नानुसार अनेक प्रयास किए हैं :

(1) पंचवर्षीय योजनाएँ (1950), **(2)** राष्ट्रीयकरण (1972), **(3)** इंदिरा गाँधी 20 सूत्रीय कार्यक्रम (1975), **(4)** जवाहरलाल रोजगार योजना (1989), **(5)** समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (1982), **(6)** स्वर्णजयंती ग्रामीण स्वरोजगार योजना (1999), **(7)** स्वरोजगार प्रशिक्षण, **(8)** अन्त्योदय कार्यक्रम (1977), **(9)** प्रधानमंत्री रोजगार योजना (1993) एवं **(10)** महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना (1997)।

जैसी अनेक योजनाओं ने ग्रामीण रोजगार क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किए हैं।

राज्य सरकार एवं केन्द्र सरकार ग्रामीण गरीबों सामाजिक, आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए प्रयासरत् है। ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार के द्वारा इस क्षेत्र में प्रयास एवं उपलब्धियाँ इस प्रकार है :

(1) पंचायती राज **(2)** इंदिरा आवास योजना **(3)** जवाहर रोजगार योजना **(4)** प्रधानमंत्री आवास योजना **(5)** सुनिश्चित रोजगार योजना **(6)** समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम **(7)** स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवाओं का प्रशिक्षण **(8)** ग्राामीण दस्तकारों को टूलकिटों की आपूर्ति **(9)** सूखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम **(10)** मरूभूमि विकास कार्यक्रम **(11)** ग्रामीण जलापूर्ति व सफाई **(12)** राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम **(13)** राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना **(14)** राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना **(15)** भूमि सुधार एवं **(16)** बंजर भूमि विकास।

केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा कई तरह की योजनाएँ चलाई जा रही हैं, जिनमें से कुछ निम्नलिखित है :

(1) प्रधानमंत्री रोजगार योजना **(2)** इंदिरा आवास योजना **(3)** अटल आवास योजना **(4)** प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना **(5)** सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना **(6)** स्वर्ण जयंती स्वरोजगार योजना **(7)** मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम योजना **(8)** अन्त्योदय स्वरोजगार योजना **(9)** छत्तीसगढ़ अमृत नमक वितरण योजना **(10)** राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना **(11)** छत्तीसगढ़ मुख्यमंत्री खाद्यान्न योजना एवं **(12)** छत्तीसगढ़ ग्रामीण गरीबी उन्मूलन नवा अंजोर परियोजना।

निष्कर्ष :

वर्तमान में गरीबी उन्मूलन केन्द्रित अनेक योजनाएँ क्रियान्वयन में है, जिसमें जवाहर रोजगार योजना, समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम जैसे अनेक योजनाऐं राज्य एवं केन्द्र सरकार का मुख्य ग्रामीण विकास कार्यक्रम है। ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों पर भारी विनियोजन के बाद बेरोजगारी की समस्या भयावह बनी हुई है, जोकि शहरों की तुलना में गाँव में बेरोजगारी की समस्या विषम है। रोजगार की तलाश में गाँवों के लोग पलायन करके शहरों की ओर जाने लगे हैं। बेरोजगारी के बढ़ने से गरीबी की समस्या मुखर हो उठी है, जो कि आज एक मुख्य सामाजिक समस्या बन कर उभरी है।

केन्द्र एवं राज्य सरकार के द्वारा देश एवं राज्य से निर्धनता दूर करने हेतु उपरोक्त ग्रामीण गरीबी उन्मूलन जैसे अनेक योजनाएँ संचालित की गई, परन्तु सही तरीके से कार्यान्वित नहीं होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों से गरीबी आज भी दूर नही हो पायी है।

सुझाव :

(1) केन्द्र एवं राज्य सरकार के द्वारा जो योजनाएँ लागू की जाती है, उसका पूर्ण लाभ हितग्राहियों को प्राप्त होना चाहिए, जिसके लिए केन्द्र एवं राज्य सरकार के कोष से सीधे हितग्राहियों के बैंक एकाउन्ट में राशि जमा होनी चाहिए।

(2) योजनाओं की निगरानी के लिए किसी उच्च अधिकारी को जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए।

(3) निर्धनता दूर करने हेतु सरकार को गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले ग्रामीण बेरोजगारों के लिए शासकीय नौकरी में आरक्षण प्रदान करना चाहिए तथा इनकी योग्यता एवं आयु में छूट देना चाहिए।

(4) योजनाओं के क्रियान्वयन में नौकरशाही प्रथा का प्रभाव को समाप्त करना है।

(5) ग्रामों में कुटीर व्यवसायों की व्यवस्था की जाए।

(6) कृषि में परम्परागत तरीकों के स्थान पर नवीन तरीकों, उन्नत बीज, खाद एवं सिंचाई के नवीन साधनों का उपयोग किया जाए।

संदर्भ :

(1) आहूजा, राम (1997) : सामाजिक समस्याएँ, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ. 33.

***(2)** कलवार, सुगनचंद एवं मीणा, तेजराम (2001) : निर्धनता उन्मूलन एवं ग्रामीण विकास, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, पृ. 2.*

***(3)** सेन अमर्त्य (1977) : आर्थिक विकास और स्वांत्रय, राजपाल एण्ड संस कश्मीरी रोड़, नई दिल्ली, पृ. 4.*

***(4)** दुबे, संजीव : "भारत में गरीबी की समस्या की अवधारणा", कुरूक्षेत्र, जुलाई–1999, नई दिल्ली, पृ. 4.*

***(5)** सिंह, राजेन्द्र (1989) : भारतीय अर्थव्यवस्था में गरीबी उन्मूलन की समस्याएँ, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ. 6.*

***(6)** Minhas, B.S. : "Rural Poverty, land DistributionAnd Development," India Economic Review, Vol-v (New Series), No.-1, April-1970, p. 120.*

***(7)** DesaiA.R. (1969) : Rural sociology in India; Popular Publication Bombay; P 13-14.*

***(8)** Bardhan, P.K. : "On The Incidence of Poverty In Rural India," EconomicAnd Political Weekly,Annual number, February-1976, bombey, pp. 245-254.*

***(9)** Dandekar V.M.And Rath Nilkantha : "Poverty in India : Dimensions and Trends," Economic and Political Weekly; 1971, Bombey, p. 23.*

***(10)** Ojha P.D. : "A Configuration of Indian Poverty : InequalityAnd Levels of Living", RBI Bulletin, January, 1970, Bombay, p. 40.*

❁ ❁

UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sociology
Research Link - 161, Vol - XVI (6), August - 2017, Page No. 51-53
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

ग्रामीण वृद्धजनों के पारिवारिक स्वरुप का समाजशास्त्रीय अध्ययन (सीहोर जिले के विशेष संदर्भ में)

प्रस्तुत शोधपत्र में ग्रामीण वृद्धजनों के पारिवारिक स्वरुप का समाजशास्त्रीय अध्ययन, सीहोर जिले के विशेष संदर्भ में किया गया है। ग्रामीण वृद्धजनों के पारिवारिक स्वरुप से सम्बंधित तथ्यों के संकलन के आधार पर यह स्पष्ट हुआ है कि ग्रामीण परिवार के परंपरागत स्वरुप में परिवर्तन हो रहे हैं, जिसका प्रमुख कारण ग्रामीण परिवार में आर्थिक तंगी है। ग्रामीण परिवार के स्वरुप में संयुक्त परिवार का मिला-जुला स्वरुप सामने आया है, जिसे संयुक्त मिश्रित परिवार कहा गया है। संयुक्त मिश्रित परिवार में 54 प्रतिशत ग्रामीण वृद्धजन निवासरत हैं। परिवार के विघटन के कारण ग्रामीण वृद्धजनों की जीवनशैली पर प्रभाव हुआ है, जिसके परिणामस्वरुप उनकी पारिवारिक, आर्थिक, स्वास्थ्य व एकाकीपन सम्बंधी समस्याओं में वृद्धि हो रही है। *कुँजी शब्द : सामाजिक मूल्य, औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण, भौतिकतावाद, व्यक्तिवादिता, एकाकीपन, संयुक्त मिश्रित परिवार एवं सार्वभौमिक।*

श्रीमती सुनिता कटारिया* एवं श्रीमती वीणा साहू**

ग्रामीण समुदाय की सामाजिक संरचना का प्रमुख आधार संयुक्त परिवार प्रणाली है, जो की ग्रामीण समुदाय की प्रमुख विशेषताओं में से एक है। ग्रामीण समुदाय में सदस्यों के बीच एक–दूसरे से प्राथमिक एवं घनिष्ठ सम्बंध पाए जाते हैं, इसलिए गाँव में सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन में विभिन्नता के स्थान पर बहुत कुछ समानता देखने को मिलती है। इन सब विशेषताओं को लेकर ही गाँव या ग्रामीण समुदाय का निर्माण होता है, अर्थात् उस समुदाय को जिसमें कि ये सब विशेषताएँ मिलती हैं, गाँव या ग्रामीण समुदाय कहते हैं। श्री मुकर्जी के अनुसार गाँव को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है, ''गाँव वह समुदाय है, जहाँ कुछ सापेक्षिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक समानता, औपचारिकता, प्राथमिक समूहों की प्रधानता, जनसंख्या का घनत्व और कृषि ही प्रमुख व्यवसाय है।'' वर्तमान समाज के बदलते परिवेश में सामाजिक मूल्यों, रीति–रिवाजों, परम्परा एवं संस्कृति में बहुत तेजी से परिवर्तन हुए हैं। भारतीय सामाजिक व्यवस्था की प्रमुख विशेषता संयुक्त परिवार प्रणाली है, परन्तु वर्तमान में संयुक्त परिवार की जगह एकाकी परिवार प्रणाली का चलन बढ़ रहा है।

अध्ययन क्षेत्र व विधि :

अध्ययनकर्ता द्वारा निदर्शन पद्धति से मध्यप्रदेश के सीहोर जिले के ग्रामीण क्षेत्र का चयन किया गया है, जिसमें 60 वर्ष एवं 60 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के 300 उत्तरदाताओं को लिया गया है। अध्ययन विषय को ध्यान में रखते हुए अध्ययनकर्ता ने साक्षात्कार अनुसुची द्वारा साक्षात्कार की प्रत्यक्ष प्रणाली एवं प्रत्यक्ष अवलोकन के माध्यम से वृद्धजनों के परिवार के स्वरूप से संबंधित तथ्यों का संकलन व विश्लेषण किया गया है।

वर्तमान समाज के बदलते परिवेश में औद्योगिकीकरण, भौतिकवादता के परिणामस्वरूप परिवार के स्वरूप में भी परिवर्तन आया है। परिवार के स्वरूप से संबंधित संकलन आधार पर प्राप्त तथ्यों में एकाकी परिवार व संयुक्त परिवार दोनों का मिलता–जुलता स्वरूप प्राप्त होता है। मिश्रित परिवार से तात्पर्य ऐसे परिवारों से है, जहाँ एक साथ संयुक्त रूप से दादा–दादी, माता–पिता व उनके बच्चे एक साथ सामान्य रूप से सांस्कृतिक कार्यक्रम व उपासना में भाग लेते हैं, तथा वे एक–दूसरे से रक्त संबंधित होते हैं। परिवार के कुछ सदस्य रोजगार के लिए परिवार से दूर निवासरत हैं, परंतु परिवार के सभी पारिवारिक व सांस्कृति कार्यक्रमों में सम्मिलित होते हैं। मिश्रित संयुक्त परिवार की व्याख्या के आधार पर इरावती कर्वे के अनुसार दी गई संयुक्त परिवार की परिभाषा का मिला–जुला स्वरूप प्राप्त होता है। अतः यह भी संयुक्त परिवार का परिवर्तित स्वरूप है, जिसे संयुक्त मिश्रित परिवार कहा गया है। इसी संदर्भ में शोधकर्ता द्वारा विषय से संबंधित तथ्यों के संकलन व विश्लेषण निम्न तालिका 1 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रमांक 01

क्र0	परिवार का स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
1	संयुक्त परिवार	59	19.67
2	एकाकी परिवार	79	26.33
3	संयुक्त–मिश्रित परिवार	162	54
	योग	**300**	**100**

संकलित तथ्यों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि विषय से संबंधित तथ्यों के आधार पर संयुक्त परिवार का 19.67 प्रतिशत

**प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र विभाग), शासकीय गीतान्जलि कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)*
***शोधार्थी (समाजशास्त्र विभाग), यू.टी.डी., बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)*

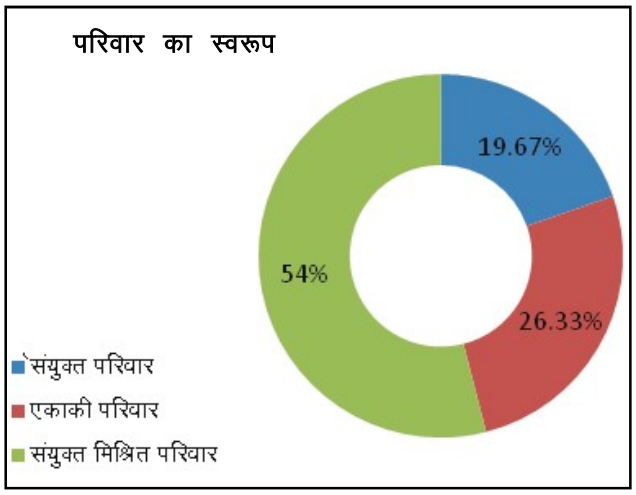

है। अध्ययन क्षेत्र में यह ऐसे परिवार हैं, जहाँ आज भी परिवार की तीन पीढ़ियाँ एक साथ एक स्थान पर निवास कर रही हैं। समाज में संयुक्त परिवार के स्वरूप में तेजी से बदलाव हो रहे हैं। तालिका में 26.33 प्रतिशत एकाकी परिवार का है, जबकि 54 प्रतिशत संयुक्त–मिश्रित परिवार का है। यह विषय से संबंधित ऐसा तथ्य है, जिसमें संयुक्त परिवार में वर्तमान समाज के अनुसार एवं परिवार की आवश्यकता की पूर्ति के लिए परिवार के कुछ सदस्य परिवार से दूर रहते हैं। समय–समय पर परिवार के पारिवारिक व सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भागीदारी निभाते हैं, जबकि परिवार के अन्य सदस्य परिवार के साथ संयुक्त रूप से एक निवास स्थान पर एक साथ रहते हैं। परिवार के स्वरूप के विश्लेषण के साथ ही इसी संदर्भ में परिवार के बदलते स्वरूप के कारणों का विवरण तालिका 2 में प्रस्तुत है।

तालिका क्रमांक 02

क्र0	परिवार के बदलते स्वरूप के कारण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	कोई जवाब नहीं	8 / 300	2.67
2	आर्थिक तंगी व बढ़ती मंहगाई	252 / 292	86.30
3	सेवा भावना में कमी	123 / 292	42.12
4	भावनात्मक लगाव में कमी	69 / 292	23.63
5	पारिवारिक सामंजस्य में कमी	95 / 292	32.53

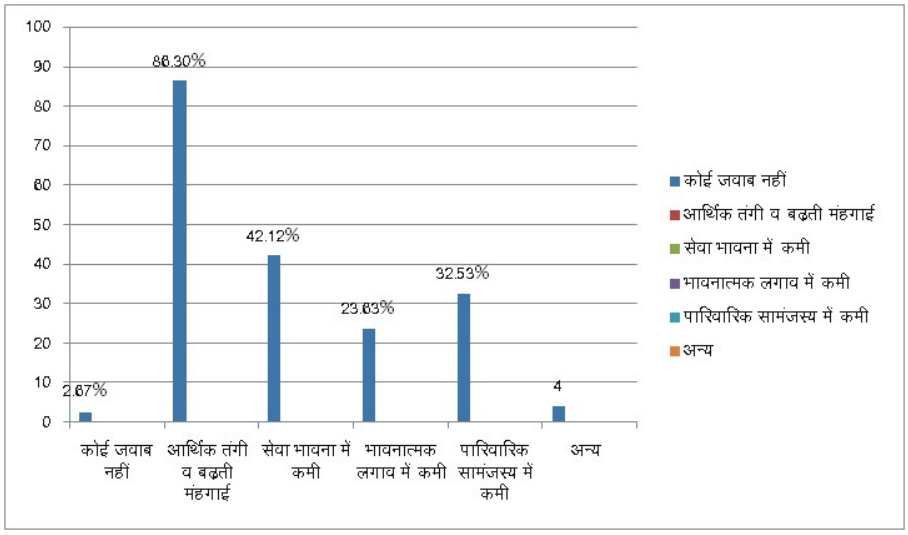

परिवार के स्वरूप में बदलाव के प्रमुख कारण :

आर्थिक तंगी व बढ़ती महंगाई :

समाज में बदल रहे परिवार के स्वरूप के कारणों में प्रमुख कारण आर्थिक तंगी व बढ़ती महंगाई है, जिसका 86.30 प्रतिशत है। ग्रामीण परिवारों की कृषि पर आर्थिक निर्भरता आर्थिक तंगी का एक बहुत बड़ा कारण है। कृषि जोतों में हो रहें विभाजन के कारण वे छोटे कृषि जोत लाभकारी नहीं रहे। कृषि क्षेत्र में इस विघटन ने ग्रामीण सामाजिक–आर्थिक संरचना को गहन रूप से प्रभावित किया है, इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण युवाओं का रोजगार प्राप्ति के लिए शहरो की ओर पलायन हो रहा है।

सेवा भावना में कमी :

संयुक्त परिवार में सेवा भावना की कमी का 42.12 प्रतिशत है। आज ग्रामीण परिवार में एक दुसरे के कार्यों में सहयोग की भावना में कमी हुई है। परिवार में परस्पर एक–दूसरे के कार्यों में सहयोग न करने के कारण परिवार के सभी सदस्यों में व्यक्तिवादिता का भाव उत्पन्न हो रहा है, जिसके कारण व्यक्ति एकाकी परिवार में रहना पसंद कर रहा है।

भावनात्मक लगाव में कमी :

वर्तमान समाज में शहर के साथ साथ ग्रामीण समाज में भी आधुनिकीकरण का प्रभाव बढ़ रहा है, भौतिक सुख सुविधाओं की चाह में व्यक्ति आधुनिक तकनीकि व संसाधनों के प्रयोग में बढ़ी तेजी से आगे बढ़ रहा है। इसके परिणामस्वरूप परिवार में परिवार के सदस्यो के मध्य प्रेम, दया, करूणा, सहानुभूति जैसे भावनात्मक मूल्यों में कमी हो रही है, जिसके कारण परिवार में एक दूसरे के प्रति लगाव में कमी आ रही है। 23.63 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि भावनात्मक लगाव में कमी के कारण परिवार के स्वरूप में बदलाव आए हैं।

पारिवारिक सामंजस्य में कमी :

पारिवारिक सामंजस्य में कमी 32.53 उत्तरदाताओं के अनुसार परिवार के बदलते स्वरूप का कारण है। परिवार में परिवार के सदस्यों के मध्य सामंजस्य बनाये रखना अत्यंत ही आवश्यक है। वर्तमान समय में बदलते परिवेश में परिवार के सदस्यों का पद, भूमिका व प्रस्थिति में परिवर्तन हुए हैं। परिणामस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति अपने अनुभवों व समझ के अनुसार निर्णय लेना पंसद कर रहे हैं। परिवार के सभी सदस्यों के विचारों में मतभेद होना एक पारिवारिक समस्या बन गई है। परिवार के स्वरूप में हो रहे परिवर्तनों में अन्य कारणों का 4 प्रतिशत जिसमें भौतिक सुख–सुविधा की चाहत, वैचारिक मतभेद, नैतिक शिक्षा की कमी, पारिवारिक सहयोग की भावना में कमी, औद्योगिकरण तथा परिवार में बुजुर्गों की उपेक्षा जैसे कारणो को उत्तरदाता द्वारा स्पष्ट किया गया है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत शोध अध्ययन के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है

कि परिवार के बदलते स्वरूप के कारणों में आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्यों का प्रभाव रहा है तथा औद्योगिकीकरण, नगरीकरण एवं आधुनिकीकरण ने संयुक्त परिवार के विघटन की प्रक्रिया को गति दी है। परिवार के स्वरूप में परिवर्तन के कारण वृद्धजनों की पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, स्वास्थ्य एवं मानसिक समस्याओं में वृद्धि हुई है। परिवार के बदलते स्वरूप के कारण वृद्धजनों पर पड़ने वाले प्रभाव निम्नलिखित हैं :

परिवार के बदलते स्वरूप का वृद्धजनों की आर्थिक स्थिति पर प्रभाव : वर्तमान समय में प्रत्येक व्यक्ति आर्थिक संपन्नता के लिए प्रयासरत है, क्योंकि आज का युग अर्थ प्रधान युग है। शहरी सुख सुविधा को देखकर वहीं निवासरत हो जाता है। आर्थिक स्थिरता एवं सम्पन्नता प्राप्त करना उनका ध्येय बन जाता है तथा परिवार के प्रति अपनी नैतिक जिम्मेदारी उसके समक्ष गौण हो जाती है, जिसमें वृद्धजनों की सेवा, सहायता, सुरक्षा, सहानुभूति एवं सहयोग भी सम्मिलित है। वृद्धजनों की पारिवारिक सदस्यों द्वारा वृद्धावस्था में सहयोग न करने पर वह अपने आपको पूर्णतः निराश्रित व असहाय महसूस करने लगते हैं। चूंकि वृद्धावस्था में आर्थिक सहायता का होना आवश्यक है।

परिवार के बदलते स्वरूप के कारण वृद्धजनों में अकेलापन : वर्तमान समाज में परिवार के बदलते स्वरूप के कारण एकाकी परिवार बढ़ गए हैं। आधुनिक शिक्षा प्राप्त कर रोजगार प्राप्ति के लिए शहरों की ओर जाना और वहीं जाकर बस जाना एक आम बात है। आधुनिक जीवन शैली पर पश्चिमीकरण के प्रभाव के कारण सामाजिक व नैतिक मूल्यों में कमी हुई है, इसके परिणामस्वरूप व्यक्तिवादिता का विकास हुआ है।

परिवार के बदलते स्वरूप के कारण वृद्धजनों के स्वास्थ्य पर प्रभाव : वृद्धावस्था में शारीरिक कमजोरी व स्वास्थ्य संबंधी समस्या होना एक स्वाभाविक क्रिया है। वृद्धावस्था में वृद्धजनों को चिकित्सा सुविधा की सर्वाधिक आवश्यकता होती है, परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों मे चिकित्सा सुविधाओं का अभाव होता है। एवं परिवार के युवाओं का रोजगार के लिए पलायन दोनो ही कारणों से वृद्धजनों की देखभाल व उपचार की समस्या उत्पन्न हो गई, जिसके कारण वृद्धजन रोगग्रस्त होकर पीड़ा भोगने के लिए बाध्य हैं।

परिवार के बदलते स्वरूप के कारण वृद्धजनों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव : ''जरा चिकित्सा संबंधी पुस्तिका'' में ए.बी. डे. एम.डी. द्वारा बताया गया है कि वृद्धावस्था में शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य में कमजोरी आने लगती है। सामान्य मनोवृत्ति कुछ–कुछ निराशाजनक होती है। परिवार में एकाकीपन, सहायता व सहयोग का अभाव, आर्थिक तंगी जैसी समस्याओं के कारण व्यक्ति चिन्ताग्रस्त हो जाता है, जिसके कारण वृद्धावस्था में व्यक्ति का स्वाभाव रूखा, चिड़चिड़ा एवं निराशावादी हो जाता है। परिवार के स्वरूप में परिवर्तन इसका एक प्रमुख कारण है।

वर्तमान समाज में हो रहे आधुनिकीकरण औद्योगिकीकरण व नगरीकरण के परिणामस्वरूप ग्रामीण परिवारों के स्वरूप में भी परिवर्तन हुए हैं। आर्थिक तंगी, बढ़ती महंगाई, सेवा भावना की कमी, भावनात्मक लगाव में कमी, पारिवारिक सामंजस्य में कमी, भौतिक सुख–सुविधा की चाहत, वैचारिक मतभेद तथा परिवार में वृद्धजनों की उपेक्षा परिवार के स्वरूप में बदलाव के प्रमुख कारण हैं। ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी, सुविधाओं का अभाव होने के कारण अधिकाअधिक युवाजन नगरों की ओर पलायन करने लगे हैं, इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण वृद्धजनों की समस्याओं में वृद्धि हुई है, जिसमें मुख्यतः आर्थिक समस्या, एकाकीपन, सेवा, सुरक्षा व सहायता का आभाव जैसी समस्याओं का समावेश है।

संदर्भ :

(1) आहूजा, राम (1995) : भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।

***(2)** आहुजा राम (2003) : सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान, रावत पब्लिकेशन, जयपुर।*

***(3)** दुबे, एस.सी. (1973) : कन्टेम्प्ररेरी इण्डिया एण्ड मार्डनाइजेशन, विकास पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली।*

***(4)** देसाई, आई.पी (1956) : द ज्वाइंट फेमिली इन इंडिया एन एनालिसिस, सोशियोलॉजीकल बुलेटिन।*

***(5)** डे.ए.बी. एम.डी. (2006) : ''जरा चिकित्सा संबंधी पुस्तिका'', भारत में वृद्धावस्था की देखभाल की चुनौतियाँ, डिपार्टमेन्ट ऑफ मेडिसिन अखिल भारतीय आर्युविज्ञान चिकित्सा संस्थान, नई दिल्ली।*

***(6)** ई. डब्ल्यू बर्गेस और एच.जे. लॉक (1953) : दि फेमिली : फ्रॉम इंस्टीट्यूशन टू कंपेनियनशिप।*

***(7)** अमेरिकन बुक, न्यूयार्क।*

***(8)** गुड तथा हॉट (1952) : मेथड इन सोशल रिसर्च, हिल बुक कम्पनी इन्स, न्यूयॉर्क।*

***(9)** जाखड़, डॉ. विक्रम सिंह (2009) : वृद्धावस्था एवं बदलते सामाजिक मूल्य, आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर।*

***(10)** कर्वे, इरावती (1953) : किनशिप ऑर्गनाइजेशन इन इण्डिया, पूना।*

***(11)** मुखर्जी, आर.के. (1926) : रूरल इकोनॉमी ऑफ इंडिया, ठक्कर एण्ड कम्पनी, बम्बई।*

***(12)** मुर्डाक, जी.पी. (1949) : सोशल स्ट्रक्चर, न्यूयॉर्क मैकमिलन।*

***(13)** यंग, पी.वी. (1953) : सर्वे एंड रिसर्च, एशिया पब्लिशिंग हाऊस, बम्बई।*

❁ ❁

UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sociology
Research Link - 161, Vol - XVI (6), August - 2017, Page No. 54-56
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

छतरपुर जिले की प्राथमिक शालाओं में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का शैक्षणिक स्थिति पर प्रभाव : एक अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र में छतरपुर जिले की प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। इस कार्य के लिए छतरपुर जिले के विभिन्न शासकीय व अशासकीय अनुदान प्राप्त विद्यालयों में से 10 विद्यालयों के 300 विद्यार्थियों का चयन किया गया है, जिनमें से 200 छात्र व 100 छात्राएँ हैं। इन विद्यार्थियों से प्राप्त जानकारी के अनुसार 180 छात्र ग्रामीण एवं 70 छात्राएँ ग्रामीण क्षेत्र से है एवं 20 छात्र और 30 छात्राएँ शहरी क्षेत्र की निवासी है। इस शोध कार्य के वास्तविक अध्ययन हेतु अनुसूची विधि का उपयोग किया गया है। शोध हेतु विद्यार्थियों के शैक्षणिक आंकड़े छतरपुर जिले की विभिन्न प्राथमिक शालाओं से लिए गए हैं। तत्पश्चात् परिणामों से स्पष्ट होता है कि, विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण का प्रभाव पड़ता है।

अभिलाषा तिवारी*, डॉ.विराज दुबे एवं वीरेन्द्र गुप्ता*****

प्रस्तावना :

भारत में प्राचीन काल से ही शिक्षा का कार्य किसी न किसी रूप में होता चला आ रहा है तथा समय के साथ देश में प्राथमिक शालाएँ स्थापित की गई हैं। प्राथमिक शिक्षा का इतिहास बहुत पुराना है। वैदिक काल से प्राथमिक शिक्षा का प्रचलन माना जाता है। वैदिक युग में वर्णक्रम व्यवस्था होती थी, आरम्भ में इस शिक्षा का स्वरुप गुरुकुलों में देखने को मिलता है। प्राथमिक शिक्षा के इतिहास को हम वैदिक युग, बौद्ध युग, मुस्लिम युग, ब्रिटिश युग का आधार मानकर हम अध्ययन कर सकते हैं।

भारत में संविधान के नीति निर्देशक सिद्धांतों में 14 वर्ष तक के सभी विद्यार्थिओं के लिए मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा के रूप में प्रावधान सुनिश्चित किया गया है, दिसम्बर 2002 में निः शुल्क व अनिवार्य शिक्षा 6–14 वर्ष के सभी विद्यार्थिओं के लिए एक मौलिक अधिकार के रूप में शामिल करने के लिए संशोधन किया गया। संविधान ने हाल के संशोधन में शिक्षा को प्रत्येक नागरिक का मौलिक अधिकार बना दिया है, जो की इस क्षेत्र में राष्ट्रीय कार्यक्रमों के निर्माण का मार्गदर्शन करता है। पिछले 5 दशकों में संस्थानों, शिक्षकों व छात्रों की संख्या में काफी उन्नति हुई है।

प्राथमिक शिक्षा : भारत में प्राथमिक शिक्षा का इतिहास बहुत पुराना है। प्राचीन काल से ही अनेक लोग उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बजाय दैनिक जीवन के लिए आवश्यक शिक्षा प्राप्त करने के बाद किसी व्यवस्था में प्रविष्ट हो जाते हैं। इससे ही लोगों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए मंदिरों में पाठशालाओं की ओर मस्जिदों में मकतबों तथा मदरसों तथा गुरुद्वारों आदि धार्मिक स्थानों पर पाठशालाएँ खोली गई हैं। आधुनिक युग में भी आर्य समाज में पाठशालाएँ खोली गई हैं।

प्राथमिक शिक्षा, आधुनिक युग का मौलिक अधिकार है एवं साक्षरता की एक अनिवार्य मांग होने के कारण एक युग धर्म बन गया है, क्योंकि प्राथमिक शिक्षा के विकास के बिना आज कोई राज्य न तो अपने देशवासियों को जीवन के प्रचुर साधन प्रदान कर सकता है और न ही अंतर्राष्ट्रीय मंच पर अपनी भूमिका का भली प्रकार से निर्वाह कर सकता है। वस्तुतः विश्व के सभी राष्ट्र प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता के आधार पर ही उच्च शिखर पर पहुँच सकते हैं, इसलिए आज प्राथमिक शिक्षा जीवन की आर्थिक समानता एवं विकास का पर्याय बन गई है।

प्राथमिक शिक्षा के अंतर्गत सैद्धांतिक विषयों की शिक्षा के साथ–साथ बच्चों का चारित्रिक, मानसिक, बौद्धिक विकास भी होता है तथा बच्चे को प्राकृतिक, मानसिक, पारिवारिक, जीवन का सामंजस्य समझ में आता है। प्राथमिक शिक्षा के आधार पर ही बच्चे का सम्पूर्ण विकास होता है, जैसे अज्ञानता, अन्धविश्वास, कुरुतियाँ, अंधश्रध्दा आदि का उसे ज्ञान होता है।

शिक्षा ही विकास की आधारशिला है, विज्ञान में तकनीकियों के सृजन से दिन–प्रतिदिन अत्यधिक उन्नति हो रही है, जिसमें अन्य देशों के साथ भारत भी शामिल है, परन्तु इसके पश्चात् भी भारत देश शैक्षिणक दृष्टि से अपरिपक्व है। भारत देश चाहे जितना भी उन्नतशील हो जाए, लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ जाता है, क्योंकि भारत देश की अधिकांश जनसंख्या अशिक्षित है, क्योंकि वे गाँवों में निवास करती है, जैसे आदिवासी जनजातियाँ।

**पी-एच.डी. शोधार्थी (समाजशास्त्र विभाग), बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)*
***प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र विभाग), शासाकीय पी.जी. महाविद्यालय, धार (मध्यप्रदेश)*
****पी-एच.डी.शोधार्थी (पादप रोग विज्ञान विभाग), राजमाता विजयाराजे सिंधिया विश्वविद्यालय, ग्वालियर (मध्यप्रदेश)*

रवीन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार, "शिक्षा विकास की प्रक्रिया है। वह बच्चों का शारीरिक, बौद्धिक, आर्थिक, व्यवसायिक, धार्मिक और अध्यात्मिक विकास करती है।"

प्राथमिक शाला के अंतर्गत विद्यार्थिओं के शाला त्यागने के प्रमुख कारणों में से जैसे गरीबी, अभिभावकों द्वारा गृह कार्य न करवाना, व्यवसाय या पशुपालन में सहयोग, मजदूरी करने के लिए पलायन कर जाना, शिक्षकों द्वारा कक्षा में रूचि पूर्ण व प्रभावी शिक्षण न करना, शिक्षकों द्वारा छात्रों को दंड, विद्यालयों में खेलकूद व पाठ्य सामग्री न होना, अभिभावकों द्वारा उचित अध्ययन सामग्री न देना, बालिका के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण इत्यादि।

शिक्षा राष्ट्र के सर्वोन्मुखी विकास की आधारशिला मानी गई है, किन्तु सर्वोन्मुखी विकास उसी समय संभव है, जब शिक्षा का जीवन के साथ तारत्मय हो अर्थात् विद्यार्थी नियमित रूप से उपस्थित होकर अपना शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं अध्यात्मिक विकास कर सके। विद्यार्थी जीवन में अनुशासन का विशेष महत्त्व है, अनुशासन ही एक ऐसा गुण है, जिसकी मानव जीवन में पग–पग पर आवश्यकता पड़ती है, इसी से चरित्र का निर्माण होता है। जब किसी देश के नागरिक शिक्षा से अनुशासित होंगे, तभी वे अपने राष्ट्र और पारिवारिक वातावरण की उन्नति में सहायक सिद्ध होंगे।

अध्ययन क्षेत्र : छतरपुर जिला म.प्र. राज्य के मध्य उत्तरी भाग में बसा हुआ है। यह जिला $24^0$20' तथा $25^0$15' उत्तरी अक्षांश और $79^0$25' तथा $80^0$10' पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है। इस जिले की पूर्व से पश्चिम तक लम्बाई 143.08 एवं उत्तर से दक्षिण तक 138.24 कि.मी. है। छतरपुर जिले का क्षेत्रफल 8687 वर्ग कि.मी. है। छतरपुर जिले की जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 1474723 है, जिसमें 788933 पुरुष एवं 685790 महिलाएँ निवास करती हैं। अध्ययन क्षेत्र छतरपुर जिले में 1939 प्राथमिक, 609 माध्यमिक, 78 हाई स्कूल एवं 48 हायर सेकेण्डरी स्कूल है।

शैक्षिक उपलब्धि : शैक्षणिक उपलब्धि से शोधार्थी का अभिप्राय उन आकड़ों या जानकारी से है, जो विद्यार्थियों (छात्र छात्राएँ) द्वारा कक्षा 1 से 5 वीं तक के वार्षिक परीक्षा फल के परिणामस्वरुप प्राप्त किए गए हैं।

पारिवारिक वातावरण : परिवार में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को सकारात्मक या नकारात्मक रूप से प्रभावित करना ही पारिवारिक वातावरण कहलाता है। अर्थात् परिवार में माता–पिता का सम्बन्ध, माता–पिता का बच्चों से सम्बन्ध एवं परिवार का अन्य सदस्यों से आपसी सम्बन्ध व उनका रहन–सहन पारिवारिक वातवरण के अंतर्गत आता है।

उद्देश्य :

(1) विभिन्न वर्ग के प्राथमिक शालाओं में अध्यनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का अध्ययन करना।

(2) विभिन्न वर्ग के प्राथमिक शालाओं में अध्यनरत विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का अध्ययन करना।

(3) विभिन्न वर्ग के प्राथमिक शालाओं में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना :

(1) विभिन्न वर्ग के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का शैक्षणिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

(2) विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं होता है।

चर :

(1) **स्वतंत्र चर :** पारिवारिक वातावरण।

(2) **आश्रित चर :** शैक्षणिक उपलब्धि।

(3) **नियंत्रित चर :** प्राथमिक शालाओं के विभिन्न वर्ग के विद्यार्थी।

न्यादर्श एवं सीमांकन :

शोधार्थी द्वारा शोध कार्य हेतु छतरपुर जिले के विभिन्न शासकीय एवं अशासकीय अनुदान प्राप्त शालाओं के हिंदी माध्यम विद्यालयों में से 10 विद्यालयों का चयन किया गया है, जिसमें से कुल 300 विद्यार्थियों को चयनित किया गया है। इन चयनित शालाओ में से प्रत्येक शाला के कक्षा 1 से 5वीं तक के 30 से 35 विद्यार्थियों को आध ाार मानकर उनका लाटरी विधि से चयन कर कुल 300 विद्यार्थियों को न्यादर्श स्वरुप लिया गया है, जिसमें 200 छात्र एवं 100 छात्राएँ शामिल हैं। इन चयनित विद्यार्थियों में 180 छात्र व 70 छात्राएँ ग्रामीण क्षेत्र से एवं 20 छात्र व 30 छात्राएँ शहरी क्षेत्र से सम्बंधित हैं।

शोध विधि :

प्रस्तुत शोध हेतु उपर्युक्त विषय की समस्या के निराकरण हेतु अनुसूची विधि का प्रयोग किया गया है।

अत : इस अध्ययन में शोध कार्य करने के लिए शोधार्थी ने सर्वप्रथम विद्यार्थियों का साक्षात्कार लेने के लिए एक अनुसूची का निर्माण किया तथा इस अनुसूची के प्रयोग से पहले यह निश्चय किया कि उनमें अधिकतर प्रश्न सकारात्मक व नकारात्मक है। इसके अतिरिक्त आंकड़ों के विश्लेषण को सरलतम रूप प्रदान करके ही सांख्यिकी को जटिलता से बचाने का प्रयास किया गया है। इस प्रकार इसमें अवलोकन. निदर्शन एवं तथ्यों के विश्लेषण का प्रयोग किया गया है।

उपकरण : प्रद्त्तों के संकलन के लिए प्रस्तुत शोध हेतु विभिन्न उपकरण एवं जानकारी शोधार्थी द्वारा लिए गए हैं :

तालिका 1 : विद्यार्थियों की शैक्षणिक स्थिति

छात्र		छात्राएँ		कुल
शहरी	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	
20	180	30	70	300

कारक : प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा अनुसूची विधि के अंतर्गत प्राथमिक शालाओं के विभिन्न वर्ग के विद्यार्थिओं द्वारा दिए गए उत्तरानुसार निम्नलिखित कारक साक्षात्कार के रूप में प्राप्त किए गए हैं, जो कि शैक्षणिक उपलब्धि को पारिवारिक वातावरण से प्रभावित करते हैं, जिसे शोधार्थी ने शोध हेतु उपकरण के रूप में प्रयोग किया है :

(अ) माता पिता की शिक्षा से सम्बंधित।

(ब) प्राथमिक शाला में किस–किस विधि से पढ़ाते हैं?

(स) शिक्षक आपके साथ कैसा वार्तालाप–व्यवहार करते हैं?

(द) शिक्षक आपको किस भाषा में पढ़ाते हैं?

(इ) क्या आपको शिक्षक की पढ़ाई हुई भाषा समझ में आती है ?

(फ) क्या तुम गृहकार्य पूरा कर शाला जाते हो ?

(ज) आपका गृहकार्य घर पर कौन करवाता है ?

(च) आपका गृहकार्य पूरा न होने पर शिक्षक क्या करते हैं?

(ई) पढ़ाई के अतिरिक्त आपको कौन सी सुविधाएँ शाला द्वारा प्रदान की जाती है ?

प्रद्त्तों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण :

विश्लेषण एवं व्याख्या :

तालिका क्रमांक 2 : विभिन्न वर्ग के पारिवारिक वातावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षिणिक उपलब्धि सम्बन्धी परिणाम

पारिवारिक वातावरण का स्तर	संख्या (N)	मध्यमान (X)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	मध्यमान अंतर (D)	क्रांतिक अनुपात (CR)	सार्थकता 0.5 = 1.96
उच्च स्तर	117	38.54	4.52	3.92	5.23	सार्थक अंतर है
निम्न स्तर	183	34.62	8.56			

स्वतंत्रता के अंश –298

0.05 एवं 0.01 दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर है।

तालिका क्रमांक : 3 विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि के प्राप्तांकों के मध्यमान में अंतर

विद्यार्थी	संख्या (N)	मध्यमान (X)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	मध्यमान अंतर (D)	क्रांतिक अनुपात (CR)	सार्थकता 0.5 = 1.96
छात्र	200	72.7	9.00	3.00	1.85	सार्थक अंतर नहीं है
छात्राएँ	100	69.7	13.03			

स्वतंत्रता के अंश –298

0.05 एवं 0.01 दोनों स्तरों पर सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका क्रमांक 2 में शैक्षणिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण के प्रभाव को ज्ञात किया गया है, जिससे स्पष्ट है कि उच्च पारिवारिक वातावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का माध्यमान 38.54 एवं निम्न पारिवारिक वातावरण वाले विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का माध्यमान 34.62 है। प्रमाणित विचलन 4.52 व 8.56 पाया गया है व इसके मध्य का क्रांतिक अनुपात 5.23 पाया गया है, जो कि सार्थकता के स्तर 0.05 एवं 0.01 के मान से अधिक है।

अतः निष्कर्ष स्वरुप कहा जा सकता है कि विद्यार्थी की शैक्षणिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण का प्रभाव पड़ता है। अतः हमारी परिकल्पना "विभिन्न वर्ग के प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का शैक्षिणिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है", मान्य नहीं होती है।

तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि छात्र व छात्राओं के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमशः 72.7 व 69.7 है। मानक विचलन 9. 00 व 13.03 है तथा माध्यमान का अंतर 3.00 है। मध्यमान के अंतर द्वारा प्राप्त क्रांतिक अनुपात 1.85 है, जो सार्थकता स्तर 0. 05 के मान 1.96 से कम है, जो यह दर्शाता है की छात्र व छात्राओं की शैक्षिणिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है। अतः परिकल्पना क्रमांक 2 "छात्र व छात्राओं की शैक्षणिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं होता", सत्य सिद्ध होती है।

सन्दर्भ :

(1) भटनागर, डॉ.सुरेश : शिक्षा मनोविज्ञान, आर.लाल.बुक डिपो, मेरठ, सूर्या पब्लिकेशन, संस्करण 95.

***(2)** गेरिट, एच.ई. : शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यकी, कल्याणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सातवां संस्करण।*

***(3)** उप्रेति, डॉ.हरिश्चन्द्र : भारतीय जनजातियाँ, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, तृतीय संस्करण।*

***(4)** जोशी, राम शरण : आदिवासी समाज और शिक्षा, श्याम बिहारी राय द्वारा ग्रन्थ शिल्पी, प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली, प्रथम संस्करण।*

***(5)** नायडू, पी.आर. : भारत के आदिवासी विकास की समस्याएँ, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली।*

***(6)** सिंह, भार्गव प्रसाद : मनोव्यज्ञानिक एवं शैक्षिक सांख्यिकी के मूल आधार, हर प्रसाद भार्गव, आगरा।*

***(7)** सिंह, डॉ.रामपाल : शैक्षिक अनुसन्धान एवं सांख्यकी, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, तृतीय संशोधित संस्करण।*

***(8)** लाल, जे.एन. : मनोविज्ञान और शिक्षा में सांख्यकी, राधा प्रकाशन, नई दिल्ली।*

***(9)** सुखिया, एस.पी. : शैक्षिक अनुसन्धान के मूल तत्व।*

***(10)** मंगल, डॉ.एस.के. एवं श्रीमति मंगल सुभ्रआ : विद्यार्थी विकास एवं शिक्षण अधिगम प्रक्रिया, लायल बुक डिपो।*

❁❁

UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sociology
Research Link - 161, Vol - XVI (6), August - 2017, Page No. 57-59
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

भारत में महिलाओं का राजनीतिक समाजीकरण

प्रस्तुत शोधपत्र, भारत में महिलाओं के राजनीतिक समाजीकरण के अध्ययन से सम्बंधित है। महिलाओं ने भारतीय राजनीति में सदैव ही अपना प्रभावी दखल रखा है। भारतीय राजनीति के परिदृश्य पर आज कई महिलाएँ हैं, जिन्होंने किसी-न-किसी रुप में भारतीय राजनीति को गहरे तक प्रभावित किया है। जहाँ राष्ट्रपति और लोकसभा अध्यक्ष महिला है। सत्तारुढ़ गठबंधन की नेता ही नहीं, लोकसभा प्रतिपक्ष की भी नेता महिला है। चार प्रमुख राजनीतिक पार्टियों कांग्रेस, बसपा, टीएमसी एवं एआईई की अध्यक्ष महिलाएँ हैं। नजमा हेपतुल्ला, वृन्दा करात, शीला दीक्षित, विजयाराजे सिंधिया सहित 14वीं लोकसभा के चुनावों में 350 महिलाएँ संसद तक पहुँच पाई थी। 15वीं लोकसभा 2009 के चुनाव में 543 कुल सीटों में से 59 सीटें अर्थात् 10.82 प्रतिशत महिलाएँ संसद में प्रतिनिधित्व कर रही हैं। लोकसभा में कांग्रेस की 23 एवं 13 भारतीय जनता पार्टी से महिला प्रतिनिधि हैं।

सविता यादव

भारत में महिलाएँ हमेशा से ही राजनीति में सक्रिय रही हैं और उन्होंने अपनी राजनीतिक जिम्मेदारियों को बहुत बेहतर ढ़ंग से पूरा भी किया है। इतिहास के पन्ने पलटने पर पता चलता है कि पूर्व–आर्मन युग (ई. पू. 3000 ई.पू. 2000) में भी महिलाएँ समाज में अपना विशिष्ट स्थान रखती थी। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के मूक प्रमाण बताते हैं कि आर्यों के पूर्व के सिंधु समाज में महिलाएँ विशेष सम्मान पाती थी। कहा जाता है कि, कोई भी समाज जितना सुसभ्य व सुसंस्कृत होगा, महिलाओं की स्थिति वहाँ पर उतनी ही श्रेष्ठ होगी। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की सिंधु सभ्यता से पता चलता है कि उस समय समाज बेहद सुसभ्य और सुसंस्कृत था, इसलिए हम कह सकते हैं कि तब महिलाएँ भी समाज में सम्मानजनक स्थान पर रही होंगी।[1]

समकालीन मेसोपोटामिया सभ्यता के आधार पर कुछ इतिहासकार मानते हैं कि सिंधु समाज, मातृ सतात्मक था और राज्य व सम्पत्ति का उत्तराधिकर, कन्याओं को मिलता था। आधुनिक केरल राज्य में मातृ सत्तात्मक पारिवरिक व्यवस्था आज भी अस्तित्व में है।

सिंधु–सभ्यता के विलोप के बाद 1500 ई.पू. के आसपास भारत में आर्यों का आगमन हुआ। इसी दौरान ऋग्वेद की रचना हुई और फिर सामवेद, यजुर्वेद और अथर्वेद भी लिखे गए। वेद ब्रह्मानस, सूत्र, उपनिषद, अख्यकस और पुराणों के अध्ययन के आधार पर इतिहासकारों ने वैदिक युग को महिलाओं की सामाजिक स्थिति के संदर्भ में स्वर्ण–युग कहा है, क्योंकि इस कालखण्ड में महिलाओं की समाज में अत्यन्त उन्नत स्थिति थी।[2]

वैदिक युग के बाद ई.पू. 600 से 300 ई.पू. के कालखण्ड को क्रांतियुग की संज्ञा दी जाती है। लगभग इसी समय कौटिल्य ने अर्थशास्त्र और मनु ने मनुस्मृति की रचना की, उस समय प्रचलन में आए बौद्ध व जैन धर्मों में स्त्रियों को क्रमशः भिक्षुणी और साध्वी बनने का तो अधिकार था, लेकिन इनकी स्थिति भिक्षु और साधकों से निम्न ही समझी जाती थी। इसी समय हिन्दू समाज में संस्कार व्यवस्था अस्तित्व में आयी, जिसमें महिलाओं को दोयम दर्जे का नागरिक माना जाता था। न तो वे शिक्षा प्राप्त कर सकती थी और न ही वेदों का अध्ययन कर सकती थी।

मनुस्मृति में कहीं भी महिला–शिक्षा का जिक्र नहीं किया गया है। क्रान्तियुग में संपत्ति पर भी महिलाओं का अधिकार समाप्त कर दिया गया था। केवल विवाह के समय परिजनों द्वारा दिये गये स्त्रीधन पर ही उनका अधिकार रह गया था। वैदिक युग में महिलाओं को जो गतिशीलता प्राप्त थी उसे भी सीमित कर दिया गया था, अब उन्हें अकेले बाहर जाने की अनुमति नहीं थी। इसके बाद गुप्तयुग में स्त्रियों की स्थिति में और भी अधिक दासत्व आ गया था।[3]

सन् 1200 से 1757 ई. तक के मध्यकाल में भारत में मुस्लिम आक्रमणकारियों ने अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया था। दूसरी ओर इस समय तक हिन्दू समाज में जाति व्यवस्था ने भी अपने पैर पसार लिए थे। इस मुगल काल में महिलाओं की स्थिति और भी दयनीय हो गई थी। ब्राह्मणों ने हिन्दू धर्म की रक्षा रक्त की शुद्धता और स्त्रियों के स्त्रीत्व को बनाए रखने के लिए महिलाओं के संबंध में नियमों को और भी अधिक कठोर बना दिया था। महिला शिक्षा पूरी तरह से समाप्त हो गयी थी और पर्दाप्रथा सभी महिलाओं के लिए अनिवार्य कर दी गयी थी। इस काल में महिलाओं की आजादी छीनकर गृहस्थी को ही उनकी समस्त गतिविधियों का केन्द्र बना दिया गया था। महिलाएँ संपत्ति का उपभोग तो कर सकती थी, लेकिन उसे बेच नहीं सकती थी। भक्ति–आन्दोलन ने तत्कालीन समाज में महिलाओं की स्थिति सुधारने के कुछ प्रयास किए।

4 चितावद रोड़, साजन नगर, कैलाश दाल मिल के पास, इन्दौर (मध्यप्रदेश)

मुगलकाल महिलाओं के लिए अंधकार युग साबित हुआ। मुगलकाल में शुरू हुआ महिलाओं की सामाजिक स्थिति का यह क्षरण ब्रिटिश शासनकाल तक लगातार जारी रहा।

इतिहास के पन्ने पलटने पर पता चलता है, कि 1857 के स्वाधीनता संग्राम से लेकर 1942 की जनक्रांति और फिर आजादी मिलने तक महिलाओं का स्वाधीनता आन्दोलन में अमूल्य व सक्रिय योगदान रहा है। एक ओर जहाँ सशस्त्र संघर्ष का सहारा लिया गया, तो दूसरी और लड़ाई का मैदान राजनीति थी। परतंत्रता के उस युग में भी महिलाएँ राजनीति के सक्रिय थी। स्वाधीनता संग्राम का अर्थ राजनीतिक क्षेत्र में विदेशी साम्राज्य से टक्कर लेना ही नहीं वरन् जनसाधारण को उस संग्राम के लिए प्रेरित करना भी था।[4]

उस दौर की महिला राजनीतिज्ञों में कितुर की रानी 1778–1829 रानी रासमठि, 1793–1861, रानी अवन्तीबाई, 1858 में रानी लक्ष्मीबाई, भीकाजी कामा 1891–1936 श्रीमती ऐनी बिसेंट 1837–1933, बेगम हजरतमहल, सरोजनी नायडू 1879, विजय लक्ष्मी पण्डित 15 अगस्त 1900 कस्तूरबा गाँधी, कमला नेहरू सूचेता कृपलानी–1908–1974, सुभद्रा कुमारी चौहान 1904–1948, कमलादेवी चटोपाध्याय 1903–1988, राजकुमारी अमृतकौर 1889–1964, मीराबहन 1872–1982, अरूणा आसफ अली 1909–1996 जिन्होंने स्वतंत्रतापूर्व की राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लिया था एवं अपने–अपने क्षेत्र में आन्दोलन का नेतृत्व किया था।[5]

1857 की क्रांति से पूर्व 1757 की प्लासी की लड़ाई से लेकर 1856 तक जंगल महाल का विद्रोह, सन्यासी विद्रोह, चुआड़ विद्रोह, कितूर विद्रोह, बैरकपूर का सैनिक विद्रोह, बहाबी विद्रोह और संथाल विद्रोह आदि विद्रोह महिला नेतृत्व में किए गए थे। इनमें चुआड़ विद्रोह का नेतृत्व रानी शिरोमणी और संन्यासी विद्रोह का नेतृत्व देवी चौधरानी ने किया था तो शिवगंगा स्टेट की रानी वेलुनाचियार, नेपाली की सम्राज्ञी लक्ष्मीदेवी, पंजाब की प्रथम क्रांतिकारी रानी जिंद तथा संथाल विद्रोह में भी आदिवासी महिलाओं ने अपने प्राण से मातृभूमि की रक्षा की।

एक ओर जहाँ मेरठ में महिलाओं ने सिपाहियों और देशवासियों में क्रांति की चिंगारी फूँकी, वहाँ बेगम हज़रत महल लखनऊ में क्रांतिकारियों का नेतृत्व कर रही थी। 30 मई 1857 ई. को क्रांति का श्री गणेश लखनऊ में हुआ। यह ज्वाला अवध के अन्य शहरों में बड़ी तेजी से फैलती चली गई और अनेक स्थानों पर क्रांतिकारी विजयी हुए। बेगम हजरत महल ने शासन की बागड़ोर अपने हाथों में ले ली और राज्य का बड़ी चतुराई और एक कुशल राजनीतिक की भांति नेतृत्व किया बेगम ने बराबर दरबार लगाकर अफसरों व सिपाहियों के मनोबल को ऊँचा रखा, उनका कहना था कि अग्रेजों की कैदी बनने से अच्छा है। अपने आप जहर खाकर अपने प्राण देश पर न्यौछावर कर दें।

महिलाओं ने भारतीय राजनीति में सदैव से ही अपना प्रभावी दखल रखा है। आजादी के लिए छिड़े सशस्त्र संघर्ष में जहाँ उन्होंने अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करवायी, वहीं आजादी के राजनैतिक आंदोलन में भी उन्होंने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया। आजादी मिलने के बाद भी वे राजनैतिक क्षेत्र में सक्रिय रही। स्वतंत्रता के बाद कई महिला राजनीतिज्ञों ने भारतीय राजनीतिक पटल पर पदार्पण किया।

समुदाय में महिलाओं की सहभागिता प्रारंभ से ही सशक्त रही है, पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, कृषि व आर्थिक कार्यों में महिलाएँ पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कार्यरत रहती हैं। महिलाओं की स्थिति में विभिन्न कालों में परिवर्तन अवश्य हुआ है।[5]

भारत में अनुसूचित जाति की महिलाओं का राजनीतिक समाजीककरण एवं राजनीतिक सहभागीता :

प्रथम दलित महिला कार्यकर्ता फागू बन्सोडे पाटील की पत्नि तुलसाबाई ने अपने पति के साथ उनके कन्धे से कंधा मिलाकर समाजसुधार अथवा दलित महिला जागृति के कार्यक्रमों में भरपूर सहयोग करती थी। अपने विचार दलित जनता तक पहुँचाने के लिए उन्होंने अपना निजी छापाखाना खड़ा किया था। उन्होंने अपने विचारों के प्रचार–प्रसार के लिए सन् 1910 में निराश्रित हिन्द नागरिक 1913 में बीटाल विध्वंसक सन् 1918 में मजदूर पत्रिका नामक समाचार पत्र निकाले थे। ये समाचार पत्र भी आर्थिक कठिनाइयों के कारण अधिक दिनों तक नहीं चल सके। किसनजी बंसोडे पाटील, सुबोध केशरी, मुम्बई वैभव ज्ञान प्रकाश आदि समाचार पत्रों में दलितों सम्बन्धि लेख लिखते थे। किसन फागूजी बंसोडे पाटील की पत्नी तुलसाबाई भी उनके साथ सामाजिक कार्य करने में अग्रणी भूमिका निभाया करती थी। छापखाने का संचालन वह बड़े ही जिम्मेदारी के साथ (सम्हालती) करती थी। किसन बन्सोडे पाटिल दलित समाज में व्याप्त दोषों को समाज के समाने लाते थे और कभी कभी उनके उन दोषों के लिये उन्हें फटकारते थे। डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर के पूर्व दलित समाचार पत्रों में मुख्यतः सामाजिक प्रश्नों पर ही समाज को जागृत करने का प्रयास किया था।[6]

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् महिलाओं की राजनीतिक चेतना में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। गाँधीजी ने स्वतंत्रता आन्दोलन में सभी वर्ग की महिलाओं को राजनैतिक धारा से जोड़कर उनकी राजनैतिक पृष्ठभूमि तैयार की, जिसे संविधान द्वारा सुदृढ़ता प्रदान की गई। महिलाओं को वोट देने का अधिकार आजादी से पूर्व 1921 में ही प्राप्त हो चुका था और जब 1936–37 में महिलाओं के लिये 41 स्थान सुरक्षित थे केवल 10 महिलाओं ने ही चुनाव लड़ा। महिलाओं ने भी मंत्री, अवर सचिव, प्रान्तीय विद्यापिका और जनसभाओं के उपाध्यक्ष के रूप में काम किया। देश की राजनीति में महिलाओं के प्रवेश की शुरूआत तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी के समय से प्रारंभ हुई। तुरंत और सटीक निर्णय लेने के लिए पहचानी जाने वाली स्व. श्रीमती इंदिरा गाँधी ने अपनी कुशलता और पराक्रम से पुरूष नेताओं को भी मात दी। 1952 में 23 महिलाएँ लोकसभा के लिए चुनी गई थी, जबकि 1984 के चुनावों में 65 महिलाओं ने संसद के रूप में चुनाव में सफलता प्राप्त की। 1999 के लोकसभा चुनावों के फलस्वरूप महिला सांसदों की संख्या 26 थी, परन्तु उनकी राजनीतिक चेतना काफी बढ़ी हुई थी। संसद और विधान मण्डलों में महिला प्रतिनिधियों की संख्या और विभिन्न गतिविधियों में उनकी सहभागिता राज्यपाल मंत्री, मुख्यमंत्री और यहाँ तक की प्रधानमंत्री तक के रूप में उनकी भूमिकाओं से स्पष्ट है कि इस देश में महिलाओं में राजनीतिक

चेतना दिनों दिन बढ़ती जा रही है। सन् 1952 के लोकसभा चुनाव में भी महिलाओं ने अपनी भागीदारी निभाई।

लोकसभा में महिलाओं का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व 1984 में (8.1) था, जो 1999 में बढ़कर 8.33 तक पहुँच गया। पूर्व की तुलना में लोकसभा में महिला प्रतिनिधियों की संख्या में निश्चित ही वृद्धि हुई है।

उच्च सदन अर्थात् राज्यसभा में भी महिला प्रतिनिधित्व कम ही रहा है। राज्यसभा में महिला प्रतिनिधित्व का सर्वाधिक 1990 में 15.5 प्रतिशत था। किन्तु इसके पश्चात् फिर इसमें कमी आ गई। 1998 में यह 8.6 प्रतिशत ही रह गया। संसद जैसी उच्च नीति निमार्ण संस्था में महिला प्रतिनिधित्व निराशाजकक ही रहा है।

विधान मण्डलों में अनुसुचित जातियों एवं अनुसुचित जनजातियों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के उद्देश्य से भारतीय संविधान के अनुच्छेद 330 और 332 के अधीन लोकसभा तथा राज्यों की विधानसभाओं में अनुसुचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित किए जाने का उपबंध किया गया है। अनुच्छेद 330 लोकसभा में **(अ)** अनुसूचित जातियों के लिए, **(ब)** अनुसूचित जनजाति सिवाय असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों को छोड़कर एवं **(स)** असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे। अनुच्छेद 332 के अनुसार प्रत्येक राज्य की विधानसभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए (असम के स्वशाती जिलों की अनुसूचित जनजातियों को छोड़कर) स्थान आरक्षित रहेंगे तथा असम राज्य की विधानसभा में स्वशासी जिलों के लिए भी स्थान आरक्षित रहेंगे। स्थानों का आरक्षण जनसंख्या के आधार पर किया जाएगा। संविधान के 84वें संशोधन अधिनियम 2000 तथा 87वें संशोधन 2003 द्वारा यह आरक्षण 2001 की जनगणना के अनुसार 2026 तक के लिए आरक्षित किए गए हैं।[13] संविधान द्वारा प्रदत लोकसभा में अनुसुचित जातियों और जनजातियों के लिए सुरक्षित स्थान का विवरण दिया गया है। संविधान के 89वें संशोधन अधिनियम 2003 द्वारा अनुच्छेद 338 के अनुसार अनुसूचित जातियों के लिए एक राष्ट्रीय अनुसूचित आयोग की स्थापना का उपबंध किया गया है।[7]

संविधान द्वारा अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के लिए लोकसभा तथा विधानसभा में स्थान आरक्षित करके उनके राजनीतिक प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित किया है तथा उन्हें विकास की मुख्यधारा में शामिल किया गया है।

संविधान के 73वें संशोधन के द्वारा पंचायतीराज संस्थाओं की ओर 74वें संविधान संशोधन द्वारा नगर पालिकाओं में लोकतांत्रिक प्रणाली की स्थापना को सांविधानिक मान्यता प्रदान की गई है। अनु. 243 और अनु. 243घ (1) के अनुसार प्रत्येक नगर पालिका एवं पंचायत में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे। ऐसे आरक्षित स्थानों की संख्या यथासम्भव उसी अनुपात में होगी, जो कि उस नगर पालिका एवं पंचायत में प्रत्यक्ष निर्वाचन से भरे गए स्थानों का अनुपात है और इसका निर्धारण उस क्षेत्र की उनकी जनसंख्या के आधार पर किया जाएगा। ऐसे स्थानों को प्रत्येक नगर पालिका एवं पंचायतों में चक्रानुक्रम (Rotation) से आवंटित किया जाएगा। खण्ड (1) के अधीन आरक्षित स्थानों में से 1/3 (एक तिहाई स्थान) अनुसूचित जातियों और जनजातियों की स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे।

73वें संविधान संशोधन अधिनियम के जरिए महिलाओं के लिए कम–से–कम एक तिहाई आरक्षण अनिवार्य हो गया है। यह आरक्षण मात्र सदस्यों के स्तर पर नहीं, वरन् अध्यक्ष पदों के लिए भी दिया गया है। इस समय लगभग 10 लाख स्त्रियाँ इस संशोधन द्वारा शुरू किए गए त्रिस्तरीय ढांचे अर्थात् ग्राम पंचायत, पंचायत समिति व जिला पंचायत में सदस्य एवं अध्यक्ष के पद पर कार्यरत हैं। इसमें से लगभग 2.50 लाख महिलाएँ अनुसूचित जाति व जनजाति की हैं। पंचायतीराज अधिनियम के माध्यम से आज लाखों महिलाएँ राजनीति की प्रारंभिक सिढ़ी पर पैर रख चुकी हैं। भारत में आज पंचायत में कुल 34 लाख निर्वाचित प्रतिनिधियों में 10 लाख महिलाएँ हैं तथा यह व्यवस्था महिलाओं को राजनीति से जोड़ने का एक सशक्त माध्यम सिद्ध हो रहा है।

चौदहवीं (14वें) लोक सभा के चुनावों में 350 महिलाएँ खड़ी हुई थी। इनमें से 42 महिलाएँ जीतकर संसद तक पहुँच पाई हैं। जबकि 13वीं लोकसभा के लिए 250 महिला उम्मीदवार खड़ी हुई थी और उनमें से 57 को सफलता मिली थी। हर राज्य से दो या तीन महिला उम्मीदवार को इस बार सफलता मिली है। महाराष्ट्र से सबसे अधिक महिलाएँ संसद में पहुँची, जिनकी संख्या 5 है। दूसरा स्थान तमिलनाडु का है, वहाँ से 4 महिला उम्मीदवार सफल हुई हैं, दिल्ली से कृष्णातीरथ को सफलता मिली। डॉ. मनमोहन सिंह मंत्रिमण्डल में महिलाओं को 10.3 प्रतिशत प्रतिनिधित्व मिला है, जिसमें 7 महिलाएँ मंत्री पद हासिल कर पाई हैं।

भारतीय राजनीति के परिदृश्य पर आज कई महिलाएँ हैं, जिन्होंने किसी न किसी रूप में भारतीय राजनीति को गहरे तक प्रभावित किया है। जहाँ राष्ट्रपति और लोकसभा अध्यक्ष महिला है। सत्तारूढ़ गठबंधन की नेता ही नहीं, लोकसभा प्रतिपक्ष की भी नेता महिला है। चार प्रमुख राजनीतिक पार्टियों कांग्रेस, बसपा, टी. एम.सी. एवं ए.आई.ई., ए.डी.एम.के. की अध्यक्ष महिलाएँ हैं। नजमा हेपमुल्ला, वृन्दाकरान, शीला दीक्षित, विजायराजे सिन्धियां सहित 14वीं लोकसभा के चुनावों में 350 महिलाएँ खड़ी हुई थी, इनमें 45 महिलाएँ जीतकर संसद तक पहुँच पाई हैं। 15वीं लोकसभा 2009 के चुनाव में 543 कुल सीटों मे से 59 सीटें अर्थात् 10.82 प्रतिशत महिलाएँ संसद में प्रतिनिधित्व कर रही हैं। लोकसभा में कांग्रेस की 23 एवं 13 भारतीय जनता पार्टी से महिला प्रतिनिधि है।

सन्दर्भ :

(1) डॉ. सिंह, निशांत (2008) : महिला राजनीति ओर आरक्षण आमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, पृ.11. ***(2)*** *डॉ. सिंह, निशांत (2008) : उपरोक्त, पृ. 12.* ***(3)*** *डॉ. सिंह, निशांत (2008) : उपरोक्त, पृ. 13.* ***(4)*** *डॉ. सिंह, निशांत (2008) : उपरोक्त, पृ. 14–15.* ***(5)*** *दीक्षित, ध्रुव कुमार : समाजशास्त्र, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, पृ. 132.* ***(6)*** *मुन्शी, एन.एल. : खोढागडे मध्यप्रान्त में दलित आन्दोलन का इतिहास, म. प्र. दलित साहित्य अकादमी, जिला शाखा बालापुर, म.प्र., पृ.15.* ***(7)*** *डॉ. पाण्डेय, जयनारायण (2010) : भारत का संविधान, सेन्ट्रल ला एजेन्सी, 3/1 मोतीलाल नेहरू रोड, इलाहाबाद, पृ. 662–663.*

❁ ❁